RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-05
May-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

भूतप्रेत अवधारणा का हिन्दू धर्म की दृष्टि से विवेचन

[1]Rekha Sirohi and [2]Dr. Gauri Shankar Dabi

[1]*Research Scholar, OPJS University, Churu, Rajasthan*
[2]*Superivor, OPJS University, Churu, Rajasthan*

हिन्दू धर्म की सामान्य मान्यतानुसार इस संसार में मनुष्ययोनि, पशुयोनि, तिर्यग्योनि आदि दृश्य योनियों के अतिरिक्त अदृश्य योनि प्रेतयोनि भी है। जीव की कुल चौरासी लाख योनियों में प्रेतयोनि भी स्वीकार गई है। प्रेतयोनि एक विलक्षण योनि है। विश्व के जनमानस में इसके प्रति सदा से अस्तित्व की छाप किसी न किसी प्रकार रही है। (लघुभागवतामृत) संस्कृत वांङ्मय में सर्वप्रथम वेदों में प्रेतों की चर्चा उपलब्ध होती है। अथर्ववेद में प्रेतापसारण के लिए मंत्र पाठ किए गए हैं। ऋग्वेद के उपवेद आयुर्वेद में प्रेतपीड़ा की चर्चा की गई है एवं प्रेत अपसारण के विभिन्न उपाय बतलाए गए हैं।

हम सभी भूतप्रेतों के विषय में सुनते हैं। भूतप्रेतों के रहस्य से हमेशा आतंकित रहते हैं। हिन्दू पौराणिक ग्रंथों एवं धर्मशास्त्रों में जीव की चौरासी लाख योनियाँ स्वीकार की गई हैं। मनुष्ययोनि, पशुयोनि, तिर्यग्योनि आदि दृश्य योनियों के अतिरिक्त अदृश्य योनि प्रेतयोनि भी है। गरूड़ पुराण ने प्रेतयोनि से संबंधित रहस्यों को जीवित मनुष्यों के कर्मफल के साथ जोड़कर संपूर्ण अदृश्य जगत का विस्तृत विवरण दिया है। वैदिक ग्रंथ गरूड़ पुराण में भूतप्रेतों के विषय में विस्तृत वर्णन उपलब्ध है। अक्सर गरूड़ पुराण का श्रवण हिन्दू समाज में आज भी मृतक की आत्मा की शांति के लिए पढ़ा जाता है।

गरूड़ पुराण में विभिन्न नरकों में जीव के पड़ने का वृतांत है। मरने के पश्चात् मनुष्य की क्या गति होती है उसका विभिन्न योनियों में जन्म, श्राद्ध कर्म आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन है।

हिन्दू सनातन धर्म, शुद्ध और सत्य आचरण पर बल देता है। पाप–पुण्य, नैतिकता–अनैतिकता, कर्तव्य–अकर्तव्य तथा इनके शुभ–अशुभ फलों पर विचार करता है, कर्म सिद्धांत का पक्षधर है। हिन्दू सनातन धर्म के अनुसार जीवात्मा विभिन्न चौरासी लाख योनियों में से किसी एक योनि में अपने कर्मफल के अनुसार जन्म लेता है। कर्मों के अनुसार स्वर्ग अथवा नरक में जाता है। गरूड़ पुराण ने इसी स्वर्ग–नरक वाली व्यवस्था का विस्तार से वर्णन किया है।

गरूड़ पुराण में 'प्रेतकल्प' में बतलाया गया है कि नरक में जाने के पश्चात् प्राणी प्रेत बनकर अपने परिजनों और संबंधियों को अनेकानेक कष्टों से प्रताड़ित करता है तथा जो व्यक्ति धर्म सम्मत आचरण नहीं करता, जिसके आचार–विचार दूषित होते हैं, जो अनीति के मार्ग को अपनाता है, ऐसा व्यक्ति प्रेतयोनि में अवश्य जाता है। उसे अनेकानेक नारकीय कष्ट भोगने पड़ते हैं। गरूड़ पुराण में प्रेतयोनि और नरक में पड़ने से बचने के उपाय भी सुझाये गए हैं। उनमें सर्वाधिक उपाय दान, पिंडदान तथा श्राद्ध कर्म आदि बतलाए गए हैं।

सर्वाधिक प्रसिद्ध प्रेतकल्प के अतिरिक्त गरूड़ पुराण में आत्मज्ञान के महत्व का भी प्रतिपादन किया गया है। परमात्मा का ध्यान ही आत्मज्ञान का सबसे सरल उपाय बतलाया गया है। उसके लिए अपने मन और इन्द्रियों पर संयम रखना परम आवश्यक है। इस प्रकार कर्मकांड पर सर्वाधिक बल देने के उपरांत भी गरूड़ पुराण में ज्ञानी और सत्यव्रती व्यक्ति को बिना कर्मकांड किए भी सद्गति प्राप्त कर परलोक में उच्च स्थान प्राप्त करने की विधि बतलाई गई है।

हिन्दू धर्म की सामान्य मान्यता के अनुसार अतृप्त इच्छाओं की वजह से व्यक्ति की आत्मा को मृत्यु के उपरान्त भी शान्ति नहीं मिलती, लेकिन हिन्दू पौराणिक ग्रंथों एवम् शास्त्रों में प्रेतयोनि प्राप्त होने का एक अन्य कारण भी दर्ज है और वह है "कर्म"।

हिन्दू पौराणिक ग्रंथों एवं धर्मशास्त्रों में बतलाया गया है कि जो व्यक्ति अपने जीवनकाल में दुष्ट प्रवृति वाले, बुरे कार्यों में लिप्त, अनैतिक, कपटी होते हैं। ऐसे व्यक्ति की आत्मा, शरीर त्यागने के पश्चात् भी इसी भूलोक पर भटकती रहती है। ऐसी अतृप्त और भटकती, अशांत आत्माओं को भूतप्रेत कहा जाता है और इस योनि को प्रेतयोनी कहते हैं।

अठारह महापुराणों में "गरूड़पुराण" का अपना एक विशेष महत्त्व है। गरूड़पुराण के उत्तरखण्ड में धर्मकाण्ड–प्रेतकल्प का विवेचन विशेष महत्वपूर्ण है। श्रीमद्भागवत् पुराण वैष्णवों का कण्ठहार तो सदा से रहा है। श्रीमद्भागवत्पुराण को तो भगवान का प्रत्यय विग्रह कहा गया है–

"तेनेयं वाङ्मयीमूर्तिः प्रत्यक्षा वर्तते हरेः।" **(श्रीमदभागवत माहात्म्य 3/62)**

तत्त्वार्थदीप निबन्ध में आचार्य श्री वल्लभ ने तो श्रीमदभागवतपुराण के स्कन्धों को पुरूष भगवान के अंग सिद्ध करते हुए उसकी और भी अधिक महिमा का गान किया गया है। ऐसे विलक्षण ग्रंथ से, जिसके पठन–पाठन से शतशः सांसारिक क्लेशों से सर्वदा के लिए मुक्ति प्राप्त होना संभव माना जाता है। प्रेतयोनि एक विलक्षण योनि है। श्रीमदभागवतपुराण से अश्वयमेव प्रेतत्व की मुक्ति होती है एवं प्रेतमात्र का उद्धार हो जाना संभव माना गया है।

पुराणों में प्रेतपीड़ा की चर्चा की गई है। श्रीमदभागवतपुराण के चतुर्थ अध्याय में प्रेतपीड़ा प्रसंग का वर्णन है। पद्मपुराण के गीता माहात्म्य के अनुसार भगवदगीता के तीसरे, सातवे, आठवे अध्याय का पाठ करने तथा इसका फल दिवंगत व्यक्तियों को मानसिक रूप से प्रदान करने से, उन्हें प्रेतयोनि से छुटकारा पाने में सहायता मिलती है।

श्रीमदभागवतपुराण में वर्णित धुंधकारी के उपाख्यान में वर्णन है – तुङ्गभद्रा नदी के किनारे आत्मदेव नामक एक ब्राह्मण रहते थे, जो कि बड़े ही सदाचारी, परोपकारी, सुशील,

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सरल स्वभाव के थे। आत्मदेव की स्त्री का नाम धुंधुली था। यह स्वभाव में बड़ी क्रूर थी। पति के आदेश के विपरीत चलती थी। साधुसंतों की निंदा का रस उसे प्रिय था। आत्मदेव के कोई संतान नहीं थी। विवाह हुए वर्षों व्यतीत हो जाने के कारण वे चिंतित होकर एक सन्यासी से पुत्र प्राप्ति हेतु एक फल लाए। आत्मदेव की पत्नी धुंधुली ने सदा की तरह पति की बात न मानकर फल नाहीं खाया तथा फल को परीक्षण के लिए गाय को दे दिया। इस तरह गाय से गोकर्ण नामक बालक हुआ और धुंधुली की बहिन के जो बालक हुआ उसने वह धुंधुली को दे दिया। धुंधुली ने बालक का नाम धुंधकारी रखा। गोकर्ण महान पंडित और धुंधुकारी महान खल बना। बाल्यावस्था में साथ के बालकों का प्राण–हरण करता, अंधों को कुँए में धकेल देता, स्त्रियों को परेशान करता एवं कुकर्माचरण में लीन रहता था। शव के हाथ से पिण्ड लेकर भाग जाना उसका खेल था। जुआ खेलना, शराब पीकर बेहोश पड़े रहना उसकी दिनचर्या थी। सत्संग से बचना व उसमें विघ्न डालना जैसे उसका परमलक्ष्य था।

पिता उसकी दशा में दुःखी होकर घर दोड़कर वन में चले गये। माता को वह नित्य पीटता था। फलतः घर के कूप में गिरकर एक दिन उसकी माता ने भी प्राण त्याग दिये। गोकर्ण ने तीर्थयात्रा पर जाने पर धुंधुकारी पूर्ण स्वतंत्र हो गया। घर में वेश्याओं को रखकर नित्य कुकर्म में रत रहता था। पशुओं की हत्या उसका नित्य काम था।

एक दिन वेश्याओं ने मदिरा पिलाकर गला घोंटकर, मुख में अंगारे डालकर नृशंसतापूर्वक उसकी हत्या कर दी और भाग गयी। इस तरह अपने कुकर्मों एवं क्रूर मृत्यु से धुंधुकारी घोर प्रेत बना।

गोकर्ण यद्यपि गया में उसे पिण्डदान कर आये थे तथापित वह प्रेत बन गया। उसे प्रेतत्व प्राप्त हुआ। रात में वह गोकर्ण के पास भी आता। कभी अग्नि रूप में, कभी जल के रूप में, कभी हाथी–ऊँट–भेड़िये के रूप में। एक समय साक्षात मानवाकार रूप में अपने गले की ओर हाथ करता दिखाई दिया। उसे प्रेतरूप में देखकर तब गोकर्ण समझ गए कि वह बोलना चाहता है। गोकर्ण ने तीर्थों का पवित्र जल धुंधुकारी पर फेंका तब धुंधुकारी ने कहा "भाई गोकर्ण! मैं धुंधुकारी हूँ, बड़े कष्ट में हूँ। मेरा किसी भी प्रकार इस प्रेतयोनि से उद्धार करो। **(भागवत माहात्म्य 5/27)**

इस पर गोकर्ण ने सूर्यनारायण से अपने भाई की प्रेतयोनि से मुक्ति का उपाय पूछा तो आकाशवाणी हुई कि "तुम भागवत सप्ताह सुनाओ। इससे तुम्हारे भाई की मुक्ति होगी।" **(भागवत माहत्म्य 5/41)**

गोकर्ण ने कथा आरंभ की। वायुरूपी प्रेत धुंधुकारी भी वहाँ आया। वह अपनी पृथक स्थिति न रखकर वहाँ एक बांस में घुस गया। सात दिन में बांस की सातों गाठे टूट गई और श्रीमदभागवत कथा का श्रवण कर धुंधुकारी अपने बुरे कर्मों से मिली प्रेतयोनि से मुक्त हो गया। वह दिव्य वेष धारणकर गोकर्ण के चरणों में गिर पड़ा व विनती की। वहाँ उपस्थित लोग यह घटना बड़े आश्चर्य से देख रहे थे। यह एक प्रेत का प्रत्यक्ष उद्धार था।

तबसे यह निश्चय हो गया कि भागवत सप्ताह से प्रेतयोनि का उद्धार होता है। प्रेतयोनि से मुक्त होने के लिए श्रीमद्भागवत का सप्ताह श्रवण सर्वोत्तम उपाय या साधन है।

"धन्या भगवती वार्ता प्रेतपीड़ाविनाशिनी।
सप्ताहोऽपि तथा धन्यः कृष्णलोकफलप्रदः।।
(श्रीमदभागवत माहत्म्य 5/53)

यह प्रेत पीड़ा का नाश करने वाली श्रीमद्भागवत की कथा धन्य है तथा श्रीकृष्ण के धाम की प्राप्ति करने वाला इसका सप्ताह–पारायण भी धन्य है। भागवत माहात्म्य में सप्ताह श्रवण के द्वारा प्रेतपीड़ा नाश की घोषणा मुक्तकण्ठ से है।

हिन्दू धर्म में जहाँ देवताओं और स्वर्ग की विशद् चर्चा है वहाँ भूतप्रेत आदि का भी उल्लेख है। तुलसीदास जी ने जहाँ देवताओं की वंदना की है। वहाँ निम्न कोटियों में पड़े रहने वाले भूत–प्रेतादि को भी वे नहीं भूले हैं–

"देव दनुज नर नाग खग प्रेत पितर गंधर्ब।
बंधऊँ किंनर रजनिचर कृपा करहु अब सर्ब।।
(रामचरितमानस 1/7 घ)

हिन्दू धर्म में कर्म की प्रधानता पर बल दिया गया है। कर्मफल के रूप में स्वर्ग–नरक की अवधारणा को स्वीकार किया गया है। हिन्दू धर्म मानता है कि ब्रह्माण्ड में ऊपर के लोक में सत् आत्मा निवास करते हैं जिसे "स्वर्ग" कहते हैं तथा नीचे एक नरक लोक है जिसमें दैत्य और भूतप्रेत इत्यादि दुष्ट आत्माएँ नरक का दुःख भोगते रहते हैं। मध्य में मनुष्य लोक है। जिसमें मनुष्य सत्कर्म द्वारा अगले जनम में स्वर्ग अथवा बुरे कर्म द्वारा नरक में जाने का अधिकारी होता है।

मुक्ति न मिलने की दशा में ये भूत प्रेतात्माएँ कई बार अपने निज जनों को परेशान करने कभी लग जाती हैं। अपने निज जनों के अलावा ये प्रेतात्माएँ अन्य लोगों को भी परेशान करती हैं। जिन व्यक्तियों का मन, गुण इनके मन, गुण से मेल खाते हैं। ये भूत प्रेतात्माएँ उसके शरीर में प्रवेश कर जाती है। जिसके बाद व्यक्ति के शरीर पर भूत–प्रेतात्मा का नियंत्रण हो जाता है। वह स्वयं को आवेशित महसूस करने लगता है।

भूतप्रेतात्माओं की मुक्ति के लिए हिन्दू धर्म अथवा प्रायः सभी धर्मों में अनेक युक्तियाँ बतलाई गई हैं। हिन्दू धर्म में मंत्र, यज्ञ का बुनियादी महत्त्व है। हिन्दू धर्म में भूतबाधा को दूर करने के लिए मुख्य साधन मंत्र और यज्ञ होते हैं।

ज्योतिष साहित्य के मूलग्रंथों–प्रश्नमार्ग, बृहत्पराषर, होरासार, फलदीपिका, मानसागरी आदि में ज्योतिषीय योग हैं जो प्रेतपीड़ा आदि बाधाओं से मुक्ति का उपाय बतलाते हैं।

गरूड़ पुराण में प्रेतयोनि दिलाने वाले निंदित कर्मों का उल्लेख किया गया है –

"पापकर्मरता ये वै पूर्वकर्मवशानुगाः।
जायन्ते ते मृताः प्रेतास्ताञ्धृणुष्व वदाम्हम्।।
वापीक्पतडागांश्च आरामं सुरमन्दिरम्।
प्रपां सद्म सुवृक्षांश्च तथा भोजनशालिकाः।।
पितृपैतामहं धर्मं विक्रीणाति स पापभाक्।
मृतः प्रेतत्वमाप्नोति यावदाभूतम्प्लवम्।।
गोचरं ग्रामसीसां च तडागारमगह्वरम्।
कर्षयन्ति च ये लोभात् प्रेतास्ते वै भवन्ति हिं।।"
(गरूड़ पुराण 22/3–6)

श्रीगरूड़ द्वारा प्रेतों के विषय में प्रश्न करने पर श्रीभगवान कहते हैं– जो पूर्वजन्म के संचित कर्म के अधीन रहकर पापकर्म में अनुरक्त रहते हैं। वे मृत्यु के पश्चात् प्रेतयोनि में जन्म लेते हैं। जो बावड़ी, कूप, जलाशय, उद्यान, देवालय, प्याऊ, घर, आम्रादि फलदार वृद्ध, रसोईघर,

पितृ–पितामह के धर्म को बेच देता है, वह पाप का भागी होता है। ऐसा व्यक्ति मरने के बाद प्रलयकाल तक प्रेतयोनि में रहता है। जो लोग लोभवश गोचर भूमि, ग्राम की सीमा, जलाशय, उपवन और गुफा भाग को जोत लेते हैं। वे प्रेत होते हैं। इसी प्रकार –

"असंस्कृतप्रमीता ये विहिताचारवर्जिताः।।
वृषोत्सर्मादिलुप्ताश्च लुप्तमासि कपिण्डकाः।
पतनात् पर्वतानां च भित्तिपातेन ये मृताः।
रजस्वलादिदोषैश्च न च भूमौ मृताश्च ये।।
अन्तरिक्षे मृता ये च विष्णुस्मरणवर्जिताः।
सूतकैः श्वादिसम्पकैः प्रेतभावा इह क्षितो।।"

(गरूड पुराण 22/9–12)

जिनका मरने पर संस्कार नहीं हुआ है, विहिप आचार से रहित, वृषोत्सर्ग से रहित और मासिक पिण्डदान जिनका लुप्त हो गया है। पर्वतों अथवा दीवार ढहने से जिनकी मृत्यु हो जाती है, निन्दित दोषों से जिनकी मृत्यु भूमि में नहीं होती, जिनकी मृत्यु अंतरिक्ष में होती है। जो भगवान विष्णु का स्मरण न करते हुए मर जाते हैं। जिनकी मृत्यु सूतक और श्वानादि निकृष्ट योनियों के संसर्ग में होती है। वे प्रेतयोनि को प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार के अन्य कारणों से जो प्राणी दुर्मृत्यु को प्राप्त होते हैं। उनको प्रेतयोनि में भटकना पड़ता है –

"मातरं भगिनीं भार्यां स्नुषां दुहितरं तथा।
अदृष्टदोषां त्यजति स प्रेतो जायते ध्रुवम्।।
भातृ धुग्ब्रह्महा गोहनः सुरापो गुरूतल्पगः।
हेमक्षौमहस्ताक्ष्र्य स वै प्रेतत्माप्नुयात्।।
न्यासापहर्ता मित्रध्रुक् परदाररतस्तथा।
विश्वासघाती क्रूरस्तु स प्रेता जायते ध्रुवम्।।
विद्यावृन्तविहीनश्च स प्रेतो जायते ध्रुवम्।।

(गरूड़ पुराण 22/14–17)

जो व्यक्ति निर्दोष माता, बहन, पत्नी, पुत्रवधू तथा कन्या का परित्याग करता है, वह निश्चित ही प्रेत होता है। जो भ्रातृद्रोही, ब्रह्मघाती, गोहन्ता, मद्यपी, गुरूपत्नी के साथ सहवास करने वाला है, वह प्रेतत्व को प्राप्त होता है। घर में रखी हुई धरोहर का अपहारक, मित्रद्रोही, परस्त्रीरत, विश्वासघाती एवं क्रूर व्यक्ति अवश्य प्रेतयोनि में जन्म लेता है। जो विद्या और सदाचार से विहीन है वह भी निस्संदेह प्रेत ही होता है।

गरूड़ पुराण में वर्णित पितामह भीष्म और युधिष्ठिर के संवाद में पंचप्रेतोख्यान तथा प्रेतत्व प्राप्ति न कराने वाले श्रेष्ठ कर्म इस विषय में एक प्राचीन इतिहास है। इस उपाख्यान में संतप्तक नामक तपस्वी ब्राह्मण तथा उनसे मिले भयंकर व विकृत दिखने वाले पांच प्रेतों की कथा वर्णित है जिसके अनुसार प्राणी को कर्मफलानुसार प्रेतयोनि मिलती हैं। प्रेतों के आहार के विषय में वर्णित है –

प्राणियों के शरीर से निकले हुए कफ, मूत्र और पुरीषादि मल एवं अन्य प्रकार से उच्छिष्ट भोजन प्रेतों का आहार है। जो घर भूतादि बलि, देवमंत्रोच्चार, अग्निहोत्र स्वाध्याय तथा व्रतपालन से हीन है। प्रेत उसमें ही भोजन करते हैं तथा प्राणी की नित्य मृत्यु हो वह अच्छा है पर उसे कभी भी प्रेतयोनि न प्राप्त हो, पंचप्रेतों द्वारा कहा गया है।

प्रेतयोनि की प्राप्ति न कराने वाले श्रेष्ठ कर्म के सम्बन्ध में ब्राह्मण संतप्तक द्वारा बतलाया गया है –

"उपवासपरो नित्यं कृच्छ्चान्द्रायणे रतः।
वृतैश्च विविधे पूतो न प्रेतो जायते नरः।।
एकादश्यां व्रतं कुर्वंजागरेण समन्वितम्।
अपरैः सुकृतैः पूतो न प्रेतो जायते नरः।।
इष्ट्वा वै वाश्वमेधादीन् दयाद् दानानि यो नरः।
आरामोद्यानवाप्यादेः प्रपायाश्चैव कारकः।।
कुमारीं ब्राह्मणानां तु विवाहयति शक्तितः।
विद्यादोऽभदश्चैव न प्रेतो जायते नरः।।

(गरूड़ पुराण 22/64–67)

अर्थात नित्य उपवास रखकर कृच्छ एवं चान्द्रायणवत् में लगा हुआ तथा अनेक प्रकार से अन्य व्रतों से पवित्र मनुष्य प्रेत नहीं होता है और अन्य सत्कर्मों से स्वयं को पवित्र रखता है, वह प्रेत नहीं होता है। जो प्राणी अवश्यमेघ आदि यज्ञों को सम्पन्न करके नाना प्रकार के दान देता है तथा क्रीड़ा, उद्यान, वाणी एवं जलाशय निर्माता है, ब्राह्मण की कन्याओं का यथाशक्ति विवाह कराता है, विद्यावान और अशरण को शरण देने वाला है। वह प्रेत नहीं होता।

इसी प्रकार राजा ब्रभुवाहन की कथा, राजा द्वारा प्रेत की निमित्त की गई और्ध्वदैहिक क्रिया एवं वृषोत्सर्ग द्वारा प्रेत का उद्धार उल्लेखित है। गरूड़ पुराण में प्रेतयोनि के निराकरण के लिए नारायण बलि का विधान उल्लेखित है तथा बतलाया गया है –

"दह्यमानस्य प्रेतस्य स्वजनैयैजलांजलिः।
दीयते प्रीतरूपोऽसौ प्रेतो याति यमालयम्।।

(गरूड़ पुराण, प्रेतकल्प 24/12)

अर्थात दाह किये गये प्रेतों के स्वजन उसे जो भावनापूर्ण जलांजलि देते हैं उससे उन्हें आत्मिक शांति मिलती है और प्रसन्न होकर प्रेतात्मा उच्चस्थ लोकों को गमन करते हैं, मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

मृत्यु के समय मरणशील व्यक्ति से दान करने की व्यवस्था भी इसी कारण थी कि व्यक्ति के सब प्रकार के मोह मिट जायें। आसक्ति के बंधन छूट जायें। इससे अंतिम समय के भीतर वे ही संस्कार तथा वे ही आकांक्षाएं प्रबल होकर उभर आती हैं, जो जीवनभर आस्था के क्षेत्र में, व्यक्ति का मूल बनी फलती और घुली मिली रहती हैं। अंत समय में उभरी भावनायें ही मरणोत्तर जीवन में भी सक्रिय रहती है। श्रीमदभगवदगीता में भी बतलाया गया है –

"यं यं वापि स्मरन्मानं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भाव– भावितः।।

(गीता 8.6)

श्रीकृष्ण कहते हैं– हे कुन्तीपुत्र अर्जुन मनुष्य अन्तकाल में जिस जिस भी भाव का स्मरण करते हुए शरीर छोड़ता है वह उस (अन्तकाल में) भाव से सदा भावित होता हुआ उसको ही प्राप्त होता है अर्थात भावों से अनुप्राणित होकर उस योनि में ही चला जाता है।

सन्यासी से इसलिए सन्यास लेते समय उसके श्राद्ध संस्कार भी उसी के द्वारा करा लिये जाते हैं कि उसकी कोई भी आकांक्षा – आसक्ति सूक्ष्म रूप में भी शेष न रहे।

जो मनुष्य जितनी अधिक वासनाएँ–आकांक्षाएँ साथ लेकर मरता है, उसके भूत प्रेत बनने की संभावना उतनी ही अधिक रहती है। तात्पर्य यह है कि हिन्दू धर्म मान्यतानुसार कर्तव्य भ्रष्टता और विवेक भ्रष्टता ही मरणोत्तर जीवन में प्रेतावस्था का कारण बनती है। साधारण मनुष्य के सूक्ष्म शरीर की स्थूल शरीर एवं इंद्रियों के साथ विशेष आसक्ति होने से मनुष्य इच्छानुसार स्थूल शरीर धारण नहीं कर सकता।

योगियों का सूक्ष्म शरीर वासना द्वारा आबद्ध नहीं होने से वे अपनी इच्छानुसार शरीर धारण कर सकते हैं। भूतप्रेतों का स्थूल शरीर होता ही नहीं, केवल सूक्ष्म शरीर होता है। सूक्ष्म शरीर में असीम बल है, इस कारण प्रेत वासना के वेग को प्रबल बनाकर आवश्यकतानुसार स्थूल शरीर धारण कर सकता है। किंतु योगी के स्थूल शरीर धारण एवं प्रेत के स्थूल शरीर धारण में अनेक अंतर हैं। योगी का अंतःकरण वासना रहित होने से वह योगसिद्धी की सहायता से अपनी इच्छानुकूल नाना प्रकार का शरीर धारण कर सकता है। प्रेत ऐसा नहीं कर सकता, वह केवल अपनी तीव्र प्रबल वासना के अनुसार थोड़े समय के लिए स्थूल शरीर बना सकता है।

उदाहरणार्थ – यदि किसी माता का चित्त अपने पुत्र में आसक्त हो वह उसी का ध्यान करते हुए शरीर त्यागकर एवं इसी कारण उसकी प्रेत योनि प्राप्त हो तो वह उस वासना के तीव्र वेग से अपने पूर्व स्थूल शरीर के अनुरूप ही स्थूल शरीर बनाकर पुत्र के निकट आ सकती है। कुछ प्राणियों को ऐसी स्वाभाविक दृष्टि भी होती है कि वे प्रेत को देख सकते हैं। ऐसे मनुष्य प्रेत की छाया, प्रेत का रूप या प्रेत ने किसी व्यक्ति पर आवेश किया होतो उस व्यक्ति के अंदर प्रेत को देख सकते हैं।

भूतप्रेतों में आत्महत्या करने की अन्तिम प्रवृति प्रबल रूप में रहती है। इस कारण वह दूसरों को भी उसी के लिए प्रेरित करता है। विक्षुब्ध, अशान्त, उद्विग्न भूतप्रेत अपने विक्षोभ और उद्विग्नता के ही विस्तार की धुन में रहते हैं। जिन वासनाओं के कारण प्रेतयोनि की प्राप्ति होती है, प्रेतयोनि में उनकी कमी नहीं होती किंतु वे और भी प्रबल हो उठती हैं। अतः प्रेत अपनी उन वासनाओं की आधार वस्तुओं को पाने एवं भोग करने के लिए सदा लालायित रहते हैं। परन्तु उस योनि उन वस्तुओं का वह यथेष्ट भोग नहीं कर सकता, इस कारण निराशा की अग्नि में वह दिन रात जलता रहता है।

मोह–मुग्ध प्रेत सदा स्वजन, प्रियपात्र आदि के साथ मिलकर जीवित अवस्था की तरह रहना चाहता है। यह सुविधा न मिलने से वह बड़ी यंत्रणा भोगा करता है। कभी–कभी प्रेत अपने प्रियपात्र उन व्यक्तियों को मारकर अपनी योनि में लाना चाहता है एवं इसके लिए चेष्टा भी करता है।

उस चेष्टा में कृतकार्य न होने से भी वह हताश होकर बड़ा दुःख पाता है। कभी कोई पुरूष अपनी प्रथम पत्नी की मृत्यु के बाद दूसरा विवाह करता है। ऐसी दशा में यदि उसकी प्रथम पत्नी को प्रेतत्व हुआ हो एवं उस मृत स्त्री की आसक्ति अपने जीवित पति पर हो जैसा होना स्वाभाविक है। तो वह अपने पति के पास स्वयं आना चाहती है एवं मौत के साथ पति का विच्छेद कराने की यथासाध्य चेष्टा भी करती है। जिस घर में वे दम्पत्ति रहते हैं उसी घर में वह प्रेतयोनि प्राप्त स्त्री भी रहने की चेष्टा करती है। ,

ऐसे ही व्यभिचारी पुरूष प्रेतयोनि में जाकर अपनी व्याभिचार वासना का परित्याग नहीं कर सकते। इस कारण ऐसे प्रेत परस्त्री या ऐसी प्रेतिनी परपुरुष के साथ अपनी नीच वासना चरितार्थ करने की चेष्टा करती है। प्रेत जिस पुरूष या स्त्री पर कामासक्त होते हैं, बहुत समय उसे मार डालने का भी प्रयत्न करते हैं और प्रेतनिवारक मंत्र औषधि आदि के द्वारा परास्त एवं निराश होकर दुःख से आहत होते हैं।

शरीर आत्मा का सबसे प्रिय और महत्वपूर्ण वाहक है। इसलिए आत्मा अधिक से अधिक स्थूल शरीर में रहना चाहती है। इसीलिए योगीसाधकों ने साधना के लिए स्थूल शरीर को महत्व दिया। मृत्यु के बाद आत्मा अपने वासनानुसार एक ऐसे शरीर का निर्माण करती लेती है जिसे हम वासना शरीर कहते हैं या भूतप्रेत कहते हैं। प्रेत की रचना के मूल में आकाशतत्व रहता है। वास्तव में यह एक ऐसा शरीर है जिसका निर्माण स्वतंत्र रूप से आत्मा ही करती है। उसे धारण करने के बाद आत्मा की संज्ञा बदल जाती है, तब हम उसे प्रेतात्मा कहते हैं।

सत्व, रज, तम इन गुणत्तय का मिश्रित रूप प्रकृति है। सम्पूर्ण चराचर जगत भूमंडल, चंद्रमंडल और सूर्यमंडल इन तीनों मंडलों में विभाजित है। चंद्रमंडल के बांयी ओर स्थित तमोगुण राज्य में तमोगुणी प्रधान तामसिक आत्माओं का निवास है। यही तामसिक आत्माएँ स्थूल जगत में भूतप्रेत, पिशाच, बेताल आदि नामों से जानी जाती है।

वासना क्षय ही प्रेतमुक्ति की साधन बतलाया गया है। भूतप्रेत जिस वातावरण में रहते हैं, उसे वासनालोक कहते हैं अथवा प्रेत लोक कहते हैं। मृत्यु के बाद आत्मा जब प्रेतयोनि को उपलब्ध हो जाती है उसके वासना से घनीभूत ऊर्जा और प्राण मिलकर प्रेत शरीर का निर्माण हो जाता है। प्रेतात्मा कुछ समय तक उसी में रहती है। प्रेतयोनि स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर के बीच का सेतु है।

वास्तव में भूतप्रेतों का जीवन एक प्रकार से कष्टमय होता है। भौतिक शरीर के अभाव, वासना के वेग के कारण उन्हें कष्ट का सामना करना पड़ता है। जिसे हिंदू धर्म में नरक यातना कहते हैं। प्रेतों में वासना प्रधान होती है।

भूत, प्रेत आदि इनका अदृश्य अस्तित्व हर समय मानव के आसपास बना रहता है। इनका मुख्य स्थान खण्डहर, जलाशय, वृक्ष, चौराहे आदि है। मानव इनसे डरता भी है और इनसे लाभ भी उठाता है। इनकी साधना कर लाभ और सिद्धी प्राप्त करने की कोशिश करता है।

भूतप्रेतों में अनेक रूपों के निर्माण की क्षमता होती है वे एक साथ कई जगह दिख सकते हैं। ये अपने शरीर को सूक्ष्म से सूक्ष्म और बड़ा से बड़ा बना सकते हैं। कभी सुन्दर रूप धरकर मानव के सामने हो जाते है और अपनी इच्छा पूर्ण कर फिर अदृश्य हो जाते हैं ये एक ही क्षण में कहीं भी आ जा सकते हैं।

हिन्दू धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि पूजा–पाठ, ध्यान–धारणा से मनुष्य स्वस्थ रहता है और भूतप्रेत आदि दूषित आत्माओं से दूर रहता है।

भूतप्रेत में आकाशतत्व और सुक्ष्मतत्व वायुतत्व ही रहता है। जिसके फलस्वरूप प्रेत तत्काल किसी भी स्थान पर पहुच जाते हैं। आकाशतत्व की विशेषता के फलस्परूप भूतप्रेत शून्य एकान्त अथवा निर्जन स्थानों पर रहना अधिक पसंद करते हैं। सूर्य की किरणे उन्हें भारी कष्ट पहुँचाती है। इसलिए अंधकार उनको प्रिय है।

भूतप्रेत उस चेतना को कहते हैं जिसका शरीर तो छूट गया है किन्तु मन नहीं घूट पाया है। मन शरीर की मांग करता है क्योंकि शरीर द्वारा ही मन की पूर्ति हो सकती है इसलिए प्रेत अपनी इच्छा, कामना और वासना की पूर्ति के लिए किसी स्त्री या पुरूष को माध्यम बना लेते हैं और उनकी इंद्रियों की सहायता से अपनी वासना की पूर्ति करते हैं। इसी को प्रेतबाधा कहते हैं।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

हमारे शरीर का निर्माण पंचतत्वों से होता है। जिसमें वायुतत्व और आकाशतत्व भी है। प्रेत शरीर में वायु और आकाश तत्व की प्रधानता है। वासना शरीर में इन्हीं दोनों तत्वों के रहने के कारण प्रेत किसी भी स्त्री या पुरूष के शरीर के भीतर स्थित इन्हीं तत्वों पर आक्रमण करते हैं। जिसके फलस्वरूप भूत प्रेत बाधित व्यक्ति की सांसे तेज–तेज चलने लगती है। देह गर्म हो जाता है, आवाजे लड़खड़ाने लगती है। सिर भारी हो जाता है। एक प्रकार की बेहोशी छा जाती है मन में उन्माद सा पैदा हो जाता है। भूतप्रेतों में वायुतत्व की विशेषता के कारण प्रेत शरीर वायवीय होता है। इसलिए इन्हें किसी भी प्रकार का अवरोध नहीं होता। ये कभी भी कहीं भी प्रकट हो सकते हैं। निशाचर जंतुओं की तरह भूतप्रेत की शक्ति रात्रि में बढ़ जाती है। एकांत स्थान, खण्डहर खाली पड़ा स्थान, श्मशान, अंधकारमय घर, वृद्ध आदि पर प्रेतों का निवास होता है।

भूतप्रेत/प्रेतात्माएं कभी कभी मृत शरीर में भी प्रवेश कर जाती हैं लेकिन इंद्रियों को नष्ट हो जाने के कारण वे ज्यादा देर तक मृत शरीर में स्थिर नहीं रह पाती हैं।

जिस किसी स्त्री या पुरूष पर भूतप्रेत आक्रमण करते हें उनकी आंखे हमेशा लाल व स्थिर रहती है, पलके बहुत देर बाद झपकती हैं। गला सूखता है प्यास बार–बार लगती है। आलस्य बना रहता है लेकिन नींद नहीं आती। स्वभाव क्रोधी, जिद्दी, उग्र और उद्ण्ड हो जाता है प्यास अधिक लगती है शरीर से दुर्गंध निकलती है। अकेले व सूनसान स्थान में रहने की इच्छा होती है। कभी कभी तो आत्महत्या करने की इच्छा भी होने लगती है। भोजन की मात्रा या तो बढ़ जाती है या कम हो जाती है। बुद्धि विभ्रम हो जाती है। जब उन पर प्रेतात्माओं का आवेश आता है तो वे एक प्रकार से गहरी मूर्च्छा में चले जाते हैं। उस अवस्था में प्रेतात्माएं शरीर के माध्यम से सारे कार्य करती हैं। एक प्रकार से शरीर उनके लिए अंधकार से प्रकाश में यानि प्रेत लोक से मानव लोक में आने का साधन बन जाता है। यही कारण है कि प्रेतात्माएं शीघ्र शरीर से हटना पसंद नहीं करती। इसलिए हिंदू धर्म में प्रेतमुक्ति का अनुष्ठान देखने को मिलता है। हिन्दू धर्म में प्रेत मुक्ति के विशेष साधन और क्रिया का वर्णन है। इसके लिए श्राद्ध कर्म आवश्यक है।

प्रेत उस चेतना को कहते हैं जिसका शरीर तो घूट गया लेकिन मन नहीं घूटा। प्रेत का अर्थ है जिसको अभी शरीर नहीं मिला है बिना शरीर के बुरी आत्मा को प्रेतात्मा कहते हैं।

मरणोपरांत किये गये श्राद्ध कर्मों और विभिन्न प्रकार के दान इत्यादि से प्रेत योनि से मुक्ति संभव है लेकिन इससे प्रेतात्मा का शमन अथवा क्षय नहीं होता और प्रेतात्मा शांत भी तभी होती है जबकि वह मरणोपरान्त कर्म श्रद्धा से किया गया होता है। हिंदू धर्म में श्राद्ध का फल श्रद्धा पर ही आधारित है।

हिन्दू धर्म में दसगात्र श्राद्ध का प्रयोजन है। गात्र का मतलब होता है अंग। एक एक पिण्ड से एकएक अंग का निर्माण होता है दस दिनों में दस अंग बनते हैं तब जाकर पूरे सूक्ष्म शरीर का निर्माण होता है और निर्माण होते ही मृतात्मा वासना शरीर अर्थात् प्रेत शरीर का परित्याग का सूक्ष्म शरीर को स्वीकार करता है और इसी को प्रेतमुक्ति कहते हैं। दसगात्र श्राद्ध का उद्देश्य है 'प्रेत मुक्ति'।

प्रेतों में वायुतत्व की मात्रा सर्वाधिक होती है। इसलिए वायु की तरह वासना शरीरधारी प्रेतात्माएं दिखलाई नहीं पड़ती लेकिन उनके स्पर्श और अस्तित्व का बोध होता है। किसी जीवित मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर उसकी इंद्रियों द्वारा अपनी भूख, प्यास आदि आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेती है।

कुछ भूतप्रेत अथवा प्रेतात्माएं ऐसे भी होते हैं जिनमें तीव्र काम वासना होती है। अतः ऐसी प्रेतात्माएं यदि पुरूष शरीर है तो किसी अनुकूल पुरूष और यदि स्त्री है तो किसी अनुकूल स्त्री को अपना माध्यम बनाती हैं और उसके शरीर में प्रवेश कर उसे संभोग के लिए मानसिक रूप से प्रेरित करती हैं और संभोग का पूर्ण आनन्द कर अपनी वासना की तृप्ती करती हैं।

प्रेतबाधा अति भयानक होती है प्रेतात्माएं शीघ्र वश में किए शरीर को छोड़ती नहीं हैं। हर समय व्यक्ति उसी के प्रभाव में रहता है। व्यक्ति की मानसिक शक्ति तो कमजोर हो जाती है लेकिन शारीरिक शक्ति काफी बढ़ जाती है। वह बेकाबू हो जाता है उसकी आंखे लाल हो जाती हैं।

जिस व्यक्ति पर भूतप्रेत का आवेश आना होता है वह अचानक जमीन पर गिर पड़ता है उसका सारा शरीर कांपने लगता है, मुँह से पानी निकलने लगता है, चेहरा लाल हो जाता है, वाणी कांपने लगती है तथा आवेश उतर जाने के बाद वह व्यक्ति स्वाभाविक अवस्था में आ जाता है और सामान्य हो जाता है।

हिन्दू धर्म में प्रेतविद्यानुसार एक ही शरीर में दो आत्माएँ एक साथ कदापि नहीं रह सकती। इसलिए मानवमन में यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि जिस समय व्यक्ति के शरीर में प्रेतात्मा का वास रहता है उस स्थिति में उस व्यक्ति के स्वयं की आत्मा कहाँ और किस अवस्था में रहती है। अतः इसे जानने के लिए हिन्दू धर्म शास्त्रों एवं पौराणिक ग्रंथों में वर्णित आत्मा की अवस्थाओं को समझना होगा। उपनिषदों में आत्मा को चतुष्पाद कहा गया है। उसके चार पाद हैं जिसे ''अवस्था'' कहते हैं। वे चार अवस्थाएँ हैं जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय। स्वप्नावस्था, जाग्रत और सुषुप्ति के बीच की अवस्था है। जाग्रत अवस्था में इंद्रियों का व्यापार रहता है और स्वप्न में इंद्रियों का व्यापार बंद हो जाता है।

इस अवस्था में अतीत और वर्तमान की जो महत्वपूर्ण वासनाएँ हैं वे सब मन के भीतर साकार और सजीव होने लगती हैं और उस अवस्था में बाहरी जगत से आत्मा अथवा मन का कोई संबंध नहीं रहता। इसीलिए स्वप्नावस्था को एक प्रकार से मृतावस्था कहा गया है। सोया हुआ व्यक्ति मृतक के समान होता है लेकिन शरीर में प्राण का संचालन रहता है। सुषुप्ति अवस्था आत्मा की अत्यंत जटिल अवस्था है। इस अवस्था में शरीर से आत्मा का संबंध बहुत ही कम रहता है।

योग के अनुसार पूर्ण सुषुप्ति तब होती है जबकि मन का अस्तित्व पूर्णतया आत्मा में विलीन हो जाता है। उसका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रह जाता। योग इसे आत्मा की मूढ़ावस्था भी कहता है। इसी को शरीर विज्ञान शास्त्री ''कोमा'' कहते हैं। निद्रावस्था और जड़ावस्था जिस प्रकार सुषुप्ति के अंग है उसी प्रकार मूढ़ावस्था भी उसका एक अंग है इस अवस्था से जाग्रत अवस्था में आत्मा की संभावना बहुत कम रहती है। केवल प्राण के कारण शरीर में स्पन्द रहता है। स्पन्द समाप्त होते ही मूढ़ावस्था मृतावस्था में बदल जाती है।

आत्मा की तुरीयावस्था परम अवस्था है यह अवस्था साधारण लोगों की आत्मा को उपलब्ध नहीं होती। योग की

RRIJM 2015, All Rights Reserved

उच्चतम भूमि का स्पर्श करने वाले योगियों को ही आत्मा की इस परम अवस्था की उपलब्धि होती है।

सुषुप्ति अथवा तुरीय अवस्था में आत्मा का अधिकार शरीर पर नहीं रहता है। यही कारण है कि सुषुप्ति अथवा तुरीयावस्था में होने पर प्रेतात्मा शरीर को अपने वश में कर लेती है अर्थात उस पर अपना अधिकार जमा लेती है।

प्रेतात्मा जिस व्यक्ति को अपना माध्यम बनाकर अपने किसी स्वार्थ की सिद्धी करना चाहती है, वे पहले उस व्यक्ति की आत्मा को स्थानान्तरित करने का प्रयत्न करती है। अपने प्रयत्न में सफल होने पर प्रेतात्मा एकाएक उस व्यक्ति के शरीर में प्रविष्ठ होती है और अपना पूर्ण अधिकार जमा लेती है। प्रवेश के क्षण व्यक्ति कुछ समय के लिए मूर्छित हो जाता है और यह वही अवस्था है जब उस व्यक्ति की आत्मा सुषुप्ति में चली जाती है और तब तक रहती है जब तक शरीर में प्रेतात्मा का वास रहता है। शरीर को साध लेने के बाद प्रेतात्मा हर समय भी व्यक्ति के शरीर में रह सकती और जब चाहे तब प्रवेश भी कर सकती है। इस प्रकार भूतप्रेताविष्ट अवस्था में व्यक्ति की आत्मा गहरी सुषुप्ति अवस्था में रहती है और उसकी जाग्रत अवस्था का उपयोग प्रेतात्मा करती है।

कुछ ऐसी भी स्थितियाँ होती हैं जिसमें भूतप्रेत बाधा से ग्रसित व्यक्ति की आत्मा जाग्रत अवस्था में ही रहती है और इंद्रियाँ भी अपना–अपना काम करती हैं। जब प्रेतात्मा की शक्ति बढ़ती है तो उसकी आत्मा जाग्रत से सुषुप्ति में चली जाती है और जाग्रत का स्थान प्रेतात्मा ले लेती है। इसी प्रकार जब प्रेतबाधा से ग्रसित व्यक्ति की स्वयं की आत्मा की शक्ति अधिक हो जाती है तो वह सुषुप्ति से जाग्रत अवस्था में चली आती है। उस समय प्रेतात्मा शरीर छोड़कर बाहर निकल आती है।

भूत प्रेतात्मा का व्यक्ति की जाग्रत अवस्था में रहने अथवा व्यक्ति की जाग्रत अवस्था का स्थान लेने के कारण व्यक्ति पर प्रेतात्मा द्वारा पहुँचाई गई क्षति और यातनाओं का प्रभाव पड़ता है। जब प्रेतात्मा का आवेश समाप्त हो जाता है और व्यक्ति सामान्य हो जाता है तब उसे इसका कोई ध्यान नहीं रहता। बस इतना ही समझ पाता है कि कोई घटना उसके साथ घटी है।

भूत प्रेतात्माओं के लिए मानव शरीर जितना सुविधाजनक अनुकूल पड़ता उतना अन्य किसी का शरीर नहीं। अपनी उपस्थिति का ज्ञान कराने अथवा किसी को डराने के लिए भूतप्रेत बिल्ली, सांप आदि के शरीर में कुछ समय के लिए प्रविष्ट हो जाते हैं। लेकिन यह वही प्रेतात्मा करती है जो रूप बदलने में असमर्थ होती है।

हिन्दूधर्म में भूतप्रेतों की योनि प्रेतयोनि कही गई है तथा मानवेतर प्राणी की प्रेतयोनि नहीं होती। हिन्दू धर्म शास्त्र पौराणिक ग्रंथ चौरासी लाख योनियों में निश्चित ही सूक्ष्म व अदृश्य प्रेतयोनि को मानते हैं। प्रेतयोनि में वायुतत्व प्रधानता के कारण भूतप्रेतात्माएँ अदृश्य रहते हैं।

भूतप्रेत साधना का तंत्र शास्त्र में भी विधान है। भूत प्रेतादि से तांत्रिक का निकट संबंध माना गया है। सभी वर्ग की प्रेतात्माएं विभिन्न प्रकार की तांत्रिक क्रियाओं द्वारा सिद्ध तांत्रिक मंत्रों द्वारा ही आकर्षित और वशीभूत होती हैं।

योग का वामाचार पक्ष मानता है कि सूक्ष्म जगत में अनेक भूतप्रेत जैसी दानवी सत्ताएं विद्यमान है। उन्हें आमुख विधि की साधना द्वारा वशवर्ती किया जा सकता है।

भूतप्रेत वशीकरण अथवा शैतानसिद्धी के लिए अघोरी और कापालिकों द्वारा क्रियाएं की जाती हैं और आशा की जाती है कि इस प्रकार वे भौतिक लाभ की चमत्कारी सिद्धियाँ सहज ही प्राप्त कर सकंगे अर्थात भूत भगाने के लिये प्रयोग में लाये जाते हैं और कुछ उनकी सहायता प्राप्त करने के उद्देश्य से।

तंत्र के जितने भी संप्रदाय है उनमें एक है अघोर संप्रदाय। अघोर संप्रदाय के अंतर्गत अनेक तामसिक साधनाएं हैं और अनेक तामसिक सिद्धियाँ है। उन्हीं साधना और सिद्धी में एक है प्रेत साधना और सिद्धी। यह साधना और सिद्धी अघोरमार्गीय साधकों का मेरूदण्ड है। इसी के आधार पर अघोरमार्गीय साधनमन चितासाधना, श्मशान साधना, कंकाल साधना, मुण्ड साधना, अस्थिसाधना आदि करते हैं। अघोरी तामसिक तंत्र क्रियाओं और तामसिक साथ ही मंत्रों द्वारा प्रेतों का आवाहन करते हैं और वचनबद्ध उनको अपने अधिकार में कर लेते हैं। इसकी को 'प्रेतसिद्धी' कहते हैं।

हिन्दू धर्म दर्शन मोक्ष को परम लक्ष्य मानता है तथा 'कल्याण' को परमार्थ पर ले जाने वाला अध्यात्मिक पथ। हिन्दू धर्म, मान्यता में वास्तव में कल्याण का उद्देश्य भगवान की ओर प्रवृत करना ही है। प्रेत पूजा करना 'कल्याण' का कदापि लक्ष्य नहीं है। प्रेतयोनि सत्य तथ्य है। तमोगुण के कारण मृतात्मा को प्रेतयोनि भोगनी पड़ती है। ये प्रेतात्माएं अपनी वासनाओं की पूर्ति हेतु जब किसी व्यक्ति के शरीर को अपने अधिकार में कर लेती है तो उसे प्रेतबाधा कहते हैं।

प्रेतत्व से बचा देना या प्रेतयोनि में छुड़ा देना हिन्दू धर्म में महान पुण्य का कार्य बतलाया गया है। प्रेतत्व निवारण के लिए तर्पण, श्राद्ध आदि विधि के साथ करने का प्रयोजन है। प्रेतत्व निवारण के लिए श्रीमद्भागवतसप्ताह, विष्णु–सहस्त्रनाम के पाठ, गायत्री–पुरश्चरण, भगवन्नाम कीर्तन, द्वादशाक्षर (ओ नमो भगवते वासुदेवाय नमः) मंत्र का जाप, गया श्राद्ध, तीर्थ श्राद्ध आदि परमावश्यक हैं। यथा योग्य इनका प्रयोग करना चाहिए।

अथर्ववेद के उपांग आयुर्वेद में प्रेतबाधा, पीड़ा और उनकी चिकित्सा बतलायी गयी है। उसमें ऐसे विशेष धूपों तथा अध्यों का उल्लेख है। जिनसे प्रेतपीड़ा मिट जाती है। महामृत्युंजय के जाप, श्री हनुमान चालीसा तथा बजरंग बाण के पाठ का प्रेतबाधा दूर करने में विशेष महत्व है। **श्री हनुमान चालीसा** में –

"भूत प्रेत निकट नहि आवै, महावीर जब नाम सुनावै **।।24।।**

अर्थात् जहाँ महावीर हनुमान का नाम लिया जाता है वहाँ भूत पिशाच भी नहीं भटकते। पंक्ति का प्रेतबाधा दूर करने में विशेष महत्व है।

ऋग्वेद में भी अनेक स्थानों पर प्रेत पिशाचों का उल्लेख मिलता है। एक स्थान पर ऋषि कहते हैं – हे श्मशानघाट के पिशाचादि यहां से दूर हो जाओ। इसके अलावा महाभारत में भी भीष्मपितामह द्वारा युधिष्टिर को श्राद्ध विधि समझाने के प्रकरण में देवविधि से पूर्व गंधर्व, दानव, राक्षस, प्रेत, पिशाच, किन्नर आदि के पूजन का वर्णन आता है। अथर्ववेद में वर्णित अनेक अनुष्ठान भूतप्रेतों और दुष्ट आत्माओं को भगाने से संबंधित हैं।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

संसार के प्रायः सभी वर्गों व धार्मिक मान्यताओं में अदृश्य शक्तियों अर्थात भूतप्रेतात्माओं आदि शक्तियों के अस्तित्व को अपने–अपने अंदाज में स्वीकार किया है। सामान्यतः सभी धर्म–दर्शन में विशेषतया भारतीय धर्म दर्शन में आत्मा अजर अमर है। जो मनुष्य के मरणोपरांत भी नष्ट नहीं होती। बल्कि इन्हीं में से अतृप्त आत्माओं की अवधारणा भूतप्रेत आदि के रूप में उत्पन्न होती है।

केवल मात्र हिन्दू धर्म में ही भूतप्रेतों के अस्तित्व को स्वीकार किया जाता है, ऐसा नहीं है। बल्कि इसके अतिरिक्त इस्लाम धार्मिक मान्यताओं, यहूदी, बौध धर्म, ईसाई धर्म को मानने वाले लोग भी प्रेतयोनि को स्वीकारते हैं।

संदर्भ सूची

1. संक्षिप्त गरूड़ पुराण–धर्मकाण्ड–प्रेतकल्प, पृष्ठ 445–494
2. श्रीमदभागवत पुराण, 5/27, 41, 3/62
3. डॉ. वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी– श्रीमदभागवत से प्रेतयोनि का कल्याण, परलोक एवं पुनर्जन्मांक, पृष्ठ 444–446
4. श्री स्वामी जी, श्री जगन्नाथचारी जी, 'प्राणाचार्य' – श्रीमदभागवत सप्ताह से प्रेतत्व मुक्ति, परलोक एवं पुनर्जन्मांक, पृष्ठ 446–451
5. श्रीमदभागवत 5/53
6. श्रीमदभागवत सप्ताह से प्रेतत्व मुक्ति, श्री स्वामी जी, श्री जगननाथचारी 'प्राणाचर्य' परलोक एवं पुनर्जन्मांक, पृष्ठ 447
7. तुलसीदास जी, रामचरित मानस् 1/7 घ
8. अरूण कुमार शर्मा, मरणोतर जीवन का रहस्य, पृष्ठ 31
9. डॉ. श्रीमाचरणी जी महेन्द्र 'मृतात्माओं का आह्वान', 'मेरे प्रयोग और अनुभव' विद्या भास्कर, दर्शनकेसरी, परलोक एवं पुनर्जन्मांक पृष्ठ 493
10. डॉ. राधाकृष्णन श्रीमाली, तंत्र एंव प्रेतविद्या, पृष्ठ 15
11. पं. श्रीराम आचार्य वाड्मय, परलोक एवं पुनर्जन्मांक, पृष्ठ 611
12. गरूड़ पुराण 22/3–6, 22/14–27, 22/9/12
13. गरूड़ पुराण 22/64–67
14. संक्षिप्त गरूड़ पुराण, पृष्ठ 530
15. संक्षिप्त गरूड़ पुराण, पृष्ठ 432, 587
16. संक्षिप्त गरूड़ पुराण, पृष्ठ 528–529
17. गरूड़ पुराण अध्याय – 21
18. पं. श्रीराम आचार्य वाड्मय, मरणोपरान्त तथ्य एवं सत्य, पृष्ठ 1.70, 1.71
19. पं. श्रीराम आचार्य वाड्मय, मरणोपरान्त तथ्य एवं सत्य, पृष्ठ 1.72
20. अरूण कुमार शर्मा, परलोक के खुलते रहस्य, पृष्ठ 30, 32
21. अरूण कुमार शर्मा, परलोक के खुलते रहस्य, पृष्ठ 190–191
22. अरूण कुमार शर्मा, अभौतिक सत्ता में प्रवेश, पृष्ठ 35
23. अरूण कुमार शर्मा, परलोक के खुलते रहस्य, पृष्ठ 284
24. अरूण कुमार शर्मा, परलोक के खुलते रहस्य, पृष्ठ 252, 259, 260, 284, 285
25. अरूण कुमार शर्मा, मरणोतर जीवन का रहस्य, पृष्ठ 147, 150, 153
26. अरूण कुमार शर्मा, मरणोतर जीवन का रहस्य, पृष्ठ 77, 218
27. अरूण कुमार शर्मा, मरणोतर जीवन का रहस्य, पृष्ठ 258, 259, 264, 265, 269
28. अरूण कुमार शर्मा, मरणोतर जीवन का रहस्य, पृष्ठ 270–272, 274, 282
29. डॉ. राधाकृष्णन श्रीमाली, भूतप्रेत, पृष्ठ 15, 29
30. आचार्य श्रीराम "सावित्री कुण्डलिनी एवं तंत्र' पृष्ठ–8.32
31. अरूण कुमार शर्मा, मरणोतर जीवन का रहस्य, पृष्ठ 246
32. अरूण कुमार शर्मा, परलोक एवं पुनर्जन्मांक, पृष्ठ 610, 611
33. डॉ. माहेश्वर उमानाथ बहादुर, 'भूतविद्या' (अदृश्य रहस्यो की पूंजी)
34. तुलसीदास जी कृत ' हनुमान चालीसा' पंक्ति 24
35. देवदत्त पटनायक 'मिथक' हिन्दू अख्यानों को समझने का प्रयास

RRIJM 2015, All Rights Reserved